दिल्ली उच्च न्यायालय: नई दिल्ली

रि.या. (आप) 3940/2008 एवं सि.वि. 7635/2008 (रोक)

निर्णय की तिथि:02 सितंबर, 2009

पुलिस आयुक्त एवं अन्य .....याचिकाकर्ता

द्वारा: श्री रोहित मदान, अधिवक्ता

बनाम

दया नंद सं. 4696/पी.सी.आर. ..... प्रत्यर्थी

द्वारा: श्री सचिन चौहान की ओर से सुश्री रितिका, अधिवक्ता।

कोरमः
माननीय श्री न्यायमूर्ति मुकुल मुद्गल
माननीय सुश्री. न्यायमूर्ति रेवा खेत्रपाल

1. क्या स्थानीय समाचार पत्रों के संवाददाताओं को निर्णय देखने की अनुमति दी जा सकती है? हाँ
2. संवाददाताओं को प्रेषित किया जाए या नहीं? हाँ
3. क्या निर्णय को डाइजेस्ट में प्रकाशित किया जाना चाहिए? हाँ

निर्णय (मौखिक)

न्या. मुकुल मुद्गल

1. पक्षों के विद्वान अधिवक्ता की सहमति से यह रिट याचिका सुनवाई के लिए ली गई है।

2. यह रिट याचिका केंद्रीय प्रशासनिक अधिकरण (इसके बाद इसे "अधिकरण" के रूप में संदर्भित) के 3 अक्टूबर, 2007 के निर्णय को चुनौती देती है, जिसमें प्रत्यर्थी कांस्टेबल दयानंद, जो दिल्ली पुलिस में ड्राइवर था, द्वारा दायर मू. आ. को अनुमति दी गई थी। अपीलार्थी के विरुद्ध आरोप एक ऐसी घटना से उत्पन्न हुआ जहाँ कुछ लुटेरों का पीछा करते समय उसके व्यक्ति के पास से सोने के आभूषणों की बरामदगी पर प्रत्यर्थी के विरुद्ध कुछ आरोप लगाए गए थे। मू. आ. में शामिल प्रश्न वास्तव में भारत के संविधान के अनुच्छेद 311 (2) (ख) के तहत विभागीय जाँच की व्यवस्था से संबंधित है। संविधान का उक्त प्रावधान इस प्रकार है:

> "311. संघ या राज्य के अधीन नागरिक क्षमताओं में कार्यरत व्यक्तियों की बर्खास्तगी, निष्कासन या पद में कमी -
>
> (1) कोई भी व्यक्ति जो संघ की सिविल सेवा या अखिल भारतीय सेवा या किसी राज्य की सिविल सेवा का सदस्य है या संघ या राज्य के अधीन कोई सिविल पद रखता है, उसे

उसके अधीनस्थ प्राधिकारी द्वारा बर्खास्त या हटाया नहीं जाएगा, जिसके द्वारा उनकी नियुक्ति की गई।

(2) उपरोक्त किसी भी व्यक्ति को उस जाँच के अलावा बर्खास्त या हटाया या रैंक में अवनति नहीं किया जाएगा, जिसमें उसे उसके विरुद्ध आरोपों के बारे में सूचित किया गया हो और उन आरोपों के संबंध में सुने जाने का उचित अवसर दिया गया हो:

[बशर्ते कि जहाँ ऐसी जाँच के बाद उस पर ऐसा कोई जुर्माना लगाने का प्रस्ताव हो, ऐसी जाँच के दौरान पेश किए गए सबूतों के आधार पर ऐसा जुर्माना लगाया जा सकता है और ऐसे व्यक्ति को प्रस्तावित दंड पर प्रतिनिधित्व करने का कोई अवसर देना आवश्यक नहीं होगा:

बशर्ते कि यह खंड लागू नहीं होगा-]

(ख) जहाँ किसी व्यक्ति को बर्खास्त करने या हटाने या उसकी रैंक कम करने का अधिकार प्राप्त प्राधिकारी संतुष्ट है कि किसी कारण से, उस प्राधिकारी द्वारा लिखित रूप में दर्ज किया जाना चाहिए, ऐसी जाँच करना उचित रूप से व्यावहारिक नहीं है।

3. संविधान के उपरोक्त प्रावधान को लागू करने के लिए प्रत्यर्थी सं. 3, पुलिस उपायुक्त, पुलिस मुख्यालय द्वारा तर्क इस प्रकार है:

"मामले की इस परिस्थिति में, पीड़ित पर अनुचित रूप से दबाव डालने और उसे धमकाने की संभावना से विभागीय कार्यवाही से इंकार नहीं किया जा सकता है। यह संभव है कि एक नियमित विभागीय जाँच में, चूककर्ता उन गवाहों को डरा देगा जो डर के कारण उसके विरुद्ध गवाही नहीं देंगे। यह उन स्पष्ट आधिकारिक गंभीर कदाचारों में से एक है जो

आपराधिक न्याय प्रणाली में जनता के विश्वास को धीरे-धीरे खत्म करता है।

इसलिए, इन परिस्थितियों में, मेरा मानना है कि ऊपर उल्लिखित कारणों से, सच्चाई सामने लाने के लिए उसके विरुद्ध नियमित विभागीय जाँच आयोजित करना व्यावहारिक नहीं है।

मामले की सभी परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए, मैं अजय कुमार, पुलिस उपायुक्त, दिल्ली एतद्द्वारा भारत के संविधान के अनुच्छेद 311 (2) (ख) के तहत कांस्टेबल (ड्राइवर) दया नंद सं. 4696/पीसीआर (पीआईएस सं. 28970052) को तत्काल प्रभाव से बर्खास्त करने का आदेश देता हूँ।

4. अनुच्छेद 311 (2) (ख) के तहत विभागीय जाँच की व्यवस्था के उपरोक्त आदेश को अपीलीय प्राधिकारी के समक्ष चुनौती दी गई थी और अपीलीय प्राधिकारी ने बड़े पैमाने पर अनुशासनात्मक प्राधिकारी के तर्क को उद्धृत करते हुए प्रत्यर्थी/अपीलार्थी द्वारा प्रस्तुत की गई विभागीय अपील को खारिज करने के लिए निम्नलिखित तर्क दिए:

"मैंने अपीलार्थी की अपील के साथ-साथ फाइल के प्रासंगिक रिकॉर्ड का ध्यानपूर्वक अध्ययन किया है। अपीलार्थी को भी 21.2.2007 को अर्दली रूम में सुना गया और उसने अपनी अपील में पहले से ही ली गई दलीलों को दोहराया। अपीलार्थी को सुनने और एएसआई वीरेंद्र सिंह सं1069/डी और हेड कांस्टेबल परशु राम, सं.1441/पीसीआर, जो उस प्रासंगिक समय पर वैन पर ड्यूटी पर थे, के तथ्यों की पुष्टि करने के बाद, और फ़ाइल में उपलब्ध रिकॉर्ड का भी अवलोकन करने

> के बाद ऐसा प्रतीत होता है कि अनुशासनात्मक प्राधिकारी द्वारा अपीलार्थी के विरुद्ध की गई कार्रवाई उचित है। अनुशासनात्मक प्राधिकारी द्वारा पारित आदेश में हस्तक्षेप करने की कोई वजह नहीं है। अपीलार्थी की अपील खारिज की जाती है।"

5. अधिकरण ने 3 अक्टूबर 2007 के आक्षेपित निर्णय में भारत संघ और अन्य बनाम तुलसी राम पटेल आदि, (1985) 3 एससीसी 398 और सत्यवीर सिंह और अन्य बनाम भारत संघ और अन्य (1985) 4 एससीसी 252 के मामलों में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा निर्धारित कानून का सार संक्षेप में प्रस्तुत किया है। अधिकरण ने आर.के. मिश्रा बनाम जी.एम.एन रेलवे, 1977 लैब के मामले में इस न्यायालय के निर्णय पर भरोसा किया। आईसी 643, जहाँ कानून की निम्नलिखित स्थिति निर्धारित की गई है:

> "अनुशासनात्मक नियम के संदर्भ में "व्यवहार्य" शब्द जाँच करने में कुछ शारीरिक या कानूनी बाधा उत्पन्न करेगा, ऐसी स्थिति उत्पन्न हो सकती है जहाँ अपचारी या जिन लोगों को जाँच करनी है या जिन्हें साक्ष्य देना है उनकी उपस्थिति सुनिश्चित करना उचित रूप से व्यावहारिक नहीं है। हालाँकि, कठोर या जल्दी कार्रवाई करने की मात्र चिंता, जो प्रशासन के दृष्टिकोण से समीचीन है, के कारण जाँच कराना अव्यावहारिक नहीं हो गया है।"

6. अधिकरण ने अपने निष्कर्ष पर पहुँचने के लिए माननीय सर्वोच्च न्यायालय के कई अन्य निर्णयों पर भरोसा किया था।

7. माननीय सर्वोच्च न्यायालय के निर्णयों से उभरी कानून की स्थापित स्थिति इस प्रकार है:

इकरामुद्दीन अहमद बोरा बनाम पुलिस अधीक्षक, दर्रांग और अन्य एआईआर 1988 एससी 2245 में, यह माना गया कि यह तय करने के लिए कि जाँच करना व्यावहारिक है या नहीं, लागू किया जाने वाला परीक्षण एक मौजूदा स्थिति के बारे में उचित दृष्टिकोण रखने वाले एक उचित व्यक्ति का है। हालाँकि, ऐसी स्थिति में जहाँ दो दृष्टिकोण संभव हों, न्यायालय हस्तक्षेप करने से इंकार कर देगा। इसके अलावा, **मुख्य सुरक्षा अधिकारी एवं अन्य बनाम सिंगासन रबी दास, एआईआर 1991 एससी 1043** में, प्रत्यर्थी को कदाचार के लिए सेवा से हटा दिया गया था, यह कहते हुए कि इस आधार पर जाँच उचित रूप से व्यावहारिक नहीं थी कि इससे व्यक्तिगत अनादर, अपमान या गवाहों को खतरा हो सकता है, हालाँकि, न्यायालय ने माना कि पर्याप्त सामग्री के पूर्ण अभाव के आलोक में, जाँच को समाप्त करना उचित नहीं था। इसके अलावा, **जसवन्त सिंह बनाम पंजाब राज्य एवं अन्य,** एआईआर 1991 एससी 385 में, यह माना गया कि संबंधित प्राधिकारी केवल अपने आईपीएसई दीक्षित (जिसका अर्थ यह होगा कि कुछ दावा किया जा रहा है लेकिन विधिवत सिद्ध नहीं किया गया है) के आधार पर विभाग की जाँच से दूर नहीं रह सकता। एक अन्य निर्णय में, यह भारत संघ और अन्य बनाम आर. रेडप्पा और अन्य, (1993) 4 एससीसी 269 में माननीय सर्वोच्च

न्यायालय द्वारा यह माना गया था, कि ऐसे मामले, जिनके परिणाम के परिणामस्वरूप अन्याय होगा या शक्ति का मनमाना प्रयोग होगा, अनुच्छेद 311(2(ख) का आश्रय नहीं लिया जा सकता।

इसके अलावा, यह **कुलदीप सिंह बनाम पंजाब राज्य और अन्य** (1996) 10 एससीसी 659 के मामले में यह माना गया था, कि जब समुचित प्राधिकारी के पास पर्याप्त सामग्री होती है तो उस पर यह निष्कर्ष निकालने के लिए भरोसा किया जा सकता है कि जैसा कि अनुच्छेद 311 (2) (ख) के तहत माना गया है जाँच करना उचित रूप से व्यावहारिक नहीं था।

चंडीगढ़ प्रशासन, केंद्र शासित प्रदेश, चंडीगढ़ और अन्य बनाम अजय मनचंदा आदि, यह माना गया कि अनुच्छेद 311 (2)(ख) को लागू करने और अनुशासनात्मक जाँच से छुटकारा पाने के आधार को पूरा करने के लिए, कुछ स्वतंत्र सामग्री पर निर्भर किया जाना चाहिए। इसके अलावा, **ओंकार लाल बजाज आदि बनाम भा. सं और अन्य,** एआईआर 2003 एससी 2562 में, यह निर्धारित किया गया था कि सार्वजनिक हित के बड़े उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए, अनुच्छेद 311 (2) से संबंधित प्रत्येक मामले को इसके खुद के प्रासंगिक तथ्यों, परिस्थितियों और गुणों के तहत अभिनिश्चित किया जाना चाहिए।

सुदेश कुमार बनाम हरियाणा राज्य एवं अन्य, (2005) 11 एससीसी 525 के मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने माना कि अनुच्छेद 311 (2) से

जुड़े मामलों में सुने जाने का उचित अवसर प्रदान किया जाना चाहिए, जिसमें अनुच्छेद 311 (2) (ख) उक्त नियम के अपवाद के रूप में कार्य करता है। **अजीत कुमार नाग बनाम महाप्रबंधक (पी.जे.) इंडियन ऑयल कॉर्पोरेशन लिमिटेड हल्दिया और अन्य,** एआईआर 2005 एससी 4217 में भी यह प्रतिपादित किया गया था कि जाँच से छुटकारा पाने के कारणों को लिखित रूप में दर्ज किया जाना चाहिए और अपचारी को सूचित किया जाना चाहिए, क्योंकि यह संविधान का अधिदेश है।

8. यह भी माना गया है कि अनुच्छेद 311(2)(ख) को जाँच शुरू होने के बाद भी लागू किया जा सकता है और हम अधिकरण द्वारा चुनी गई कानून की उपरोक्त स्थिति से पूरी तरह सहमत हैं और उसका समर्थन करते हैं। हमारा विचार है कि विभागीय जाँच की व्यवस्था प्रत्यर्थी को गंभीर रूप से प्रभावित करती है क्योंकि उसके विरुद्ध आरोपों को खारिज करने का उसका अधिकार पूरी तरह से छीन लिया गया है और इसे बेपरवाह तरीके से नहीं अपनाया जाना चाहिए, जैसा कि इस न्यायालय ने **सतीश चंद गुप्ता और अन्य, हरिओम और अन्य और अमित कुमार बनाम एमसीडी और अन्य** के मामले में माना है, रिट याचिका (सि.) सं. 8268-85, 8379-99 और 9576/2006, पर 9 जुलाई 2007 को इस प्रकार निर्णय लिया गया:

> "जहाँ प्राधिकारी किसी कारण से संतुष्ट है जिसे दर्ज किया जाना है कि कर्मचारी को कारण बताओ का अवसर देना उचित रूप से व्यावहारिक नहीं है, या जहाँ कर्मचारी को आचरण के आधार पर हटा दिया जाता है या बर्खास्त कर दिया जाता है जिसके कारण उसे दोषी ठहराया गया है, ऐसे कर्मचारी पर दोबारा जाँच करके कोई जुर्माना लगाने की प्रक्रिया को समाप्त किया जा सकता है।"

9. **दिल्ली प्रशासन और अन्य बनाम पूर्व-कांस्टेबल इंद्रजीत और अन्य,** सि.रि.या. सं. 4196/1998 में 17 सितंबर 2002 को इस न्यायालय के एक अन्य निर्णय में इसे इस प्रकार रखा गया था:

> "इस प्रकार, एक मामला बनाया जाना चाहिए, जो उक्त प्रावधान को लागू करेगा, यदि यह दिखाने के लिए कोई सामग्री अभिलेख पर नहीं लाई गई है कि ऐसी जाँच क्यों करना उचित रूप से व्यावहारिक नहीं है और यदि इसके समर्थन में पर्याप्त और ठोस कारण नहीं बताए गए हैं, तो आदेश अकृतता होगा। यहाँ तक कि ऐसे मामले में जहाँ आदेश पर्याप्त सामग्री (सामग्रियों) के अस्तित्व को प्रकट या खुलासा नहीं करता है, अपील दायर होने की स्थिति में अपील न्यायालय के समक्ष ऐसी सामग्री प्रस्तुत करना विभाग के लिए अनिवार्य हो जाता है।

10. हमारे विचार में, अधिकरण ने ठीक ही माना है कि यह संवैधानिक प्रावधान का घोर दुरुपयोग है कि अपचारी अधिकारी, जिनमें से अधिकांश उससे वरिष्ठ पुलिस अधिकारी होंगे, गवाहों को डरा सकता है।

11. हम अधिकरण के उक्त तर्क से पूरी तरह सहमत हैं। इसमें कोई विवाद नहीं है कि वर्तमान मामले में प्रत्यर्थी एक कांस्टेबल है यहाँ तक कि अपील प्राधिकारी ने भी टिप्पणी की कि तथ्यों को सहायक उप निरीक्षक वीरेंद्र सिंह और हेड कांस्टेबल परशु राम से सत्यापित किया गया था जो वैन में ड्यूटी पर थे, और चूँकि ये दोनों पुलिस अधिकारी प्रत्यर्थी से वरिष्ठ हैं, जो केवल एक कांस्टेबल था, इसलिए अधिकरण द्वारा प्रत्यर्थी के विरुद्ध विभागीय जाँच के आदेश को रद्द करना बिल्कुल उचित था। तदनुसार, हमें आक्षेपित निर्णय में हस्तक्षेप करने का कोई कारण नहीं दिखता और रिट याचिका को सि.वि. 7635/2008 के साथ जुर्माने के बारे में कोई आदेश दिए बिना खारिज कर दिया जाता है।

न्या. मुकुल मुद्गल

न्या. रेवा खेत्रपाल

02 सितंबर, 2009
डॉ.

(Translation has been done through AI Tool: SUVAS)

अस्वीकरण : *देशी भाषा में निर्णय का अनुवाद मुकद्दमेबाज़ के सीमित प्रयोग हेतु किया गया है ताकि वो अपनी भाषा में इसे समझ सकें एवं यह किसी अन्य प्रयोजन हेतु प्रयोग नहीं किया जाएगा/ समस्त कार्यालयी एवं व्यावहारिक प्रयोजनों हेतु निर्णय का अंग्रेज़ी स्वरूप ही अभिप्रमाणित माना जाएगा और कार्यान्वयन तथा लागू किए जाने हेतु उसे ही वरीयता दी जाएगी।*